International Journal of Applied Research 2019; 5(9): 109-111

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(9): 109-111
www.allresearchjournal.com
Received: 21-07-2019
Accepted: 25-08-2019

पुष्पा कुमारी
गवेषिका, इतिहास विभाग ल0 ना0 मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार भारत।

Correspondence
पुष्पा कुमारी
गवेषिका, इतिहास विभाग ल0 ना0 मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार भारत।

मिथिला में पारम्परिक शिक्षा की दशा–दिशा

पुष्पा कुमारी

सारांशः
प्राचीन काल से ही मिथिला पूरे भारतीय प्रायद्वीप में शिक्षा के महत्त्वपूर्ण केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध रहा है। भारत में ब्रिटिश राज की स्थापना से मिथिला में पारम्परिक शिक्षा पर प्रतिकूल असर पड़ने की संभावना पैदा हो गई। अतः इस अवधि में न्याय तथा मीमांसा की मध्ययुगीन परम्परा का ह्रास होने लगा फिर भी मिथिला में। पारम्परिक शिक्षा की धारा पूरी तरह कुंद नहीं हुई थी। प्रस्तुत आलेख में 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में राजनैतिक, प्रशासनिक परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में मिथिला में पारम्परिक शिक्षा की दशा–दिशा का विश्लेषण करने का प्रयास किया जायेगा।

कूट शब्दः मिथिला, पारम्परिक शिक्षा, दशा–दिशा

प्रस्तावना
आदिकाल से ही मिथिला शिक्षा एवं ज्ञान के क्षेत्र में ख्याति के शिखर पर रहा है। मिथिला में पारम्परिक शिक्षा के विविध अंगों का अन्वेषण और अर्जन, अर्जित विद्या का नवीकरण, परिवर्द्धन और संरक्षण ने न केवल मिथिला को बल्कि अनेक अंगों में सम्पूर्ण भारत के सुदूर अतीत से लेकर अब तक सर्वोत्तम बने रहने का आधार प्रस्तुत किया।
औः मैली के अनुसार शमिथिला का इतिहास युद्धों की भीषणता में नहीं ज्ञान और साहित्य के विलासपूर्ण आनन्द में संचित है।[1] मिथिला की ख्याति, शौर्य और पराक्रमपूर्ण विजयों के लिए नहीं अपितु उस विद्या केन्द्र के लिए है, जहाँ मिथिला के कई तेजस्वी विद्वानों ने प्राचीनकाल से ही मिथिला की पहचान एक प्रमुख शिक्षा केन्द्र के रूप में किया है, जहाँ बड़े–बड़े विद्वानों ने अपने ज्ञान का प्रकाश मिथिला के समाज में ही नहीं, बल्कि विश्व के समाज में भी इन शिक्षा के आगे बढ़ाने का काम किया, जिनमें जनक, याज्ञवल्क्य, गौतम, कपिल, कणाद, मण्डन, वाचस्पति मिश्र आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन सभी विद्वानों का योगदान ज्ञान के क्षेत्र में अत्यन्त ही श्लाघनीय था। जाहिर है, कि ये लोग ऐसे विद्वान थे जिनकी विद्वता का लोहा सर्वत्र माना जाता था।[2]
गौरतलब है कि ये विद्वान अपने आश्रम में ही बच्चों को शिक्षा प्रदान करते थे, और छात्र यहीं से शिक्षा प्राप्त कर विद्वान बनते थे। मिथिला में पूर्व मध्यकाल के दौरान भी पारम्परिक शिक्षा के क्षेत्र में कई विद्वानों ने अपना योगदान कायम रखा। जिनमें कुमारिल भट्ट, वाचस्पति मिश्र, सुचित्र मिश्र, गोविन्द ठाकुर आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन महान विद्वानों ने मीमांसा एवं दर्शन के क्षेत्र में मिथिला को महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठा दिलायी।[3] कर्नाट काल के दौरान न्याय एवं मीमांसा के अध्ययन ने मिथिला को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति दिलवायी। गंगेश उपाध्याय, वर्द्धमान, वासुदेव मिश्र, चंदेश्वर, ज्योतिरीश्वर आदि कई विद्वानों ने अपनी शैक्षणिक प्रतिभा से महत्त्वपूर्ण ग्रंथों की रचना कर प्राचीन दर्शन के विकास को कर्नाटकाल में मजबूत आधार प्रदान किया।
गौरतलब है कि ओइनवार काल एवं खंडेलवाल काल के दौरान देश के विभिन्न भागों से विद्यार्थी मिथिला में आते थे, जहाँ न्याय एवं मीमांसा की जानकारी प्राप्त करते थे, मिथिला में ज्यादातर शिक्षा संस्कृत भाषा में ही दी जाती थी। क्षेत्रीय भाषा होने के कारण विद्वान चण्डेश्वर, श्रीधर, विद्यापति, लखिमा ठकुराईन, चन्द्रकला आदि ने मैथिली भाषा के विकास में पर्याप्त योगदान दिया। वहीं विद्वान चण्डेश्वर ने वर्णरत्नाकर के रूप में प्रथम गद्य की रचना भारतीय भाषा में किया है, वहीं विद्यापति के अमर गीतों की रचना का मैथिली ही नहीं बल्कि उड़िया, असमी तथा बंगला साहित्य एवं भाषा के विकास में अमूल्य योगदान रहा है।
खण्डेवाल वंश के संस्थापक महेश ठाकुर भी एक प्रख्यात विद्वान थे और अपनी श्रेष्ठता के बल पर ही अकबर से मिथिला का राज्य 18वीं सदी में प्राप्त कर लिया। जहाँ इन्होंने न्याय दर्पण, दायसार, अतीचारादि आदि ग्रन्थ की रचना की।
इस प्रकार मिथिला के पारम्परिक शिक्षा को विद्वान शासकों द्वारा भरपूर संरक्षण दिया गया, लेकिन

अलीवर्दी खाँ के द्वारा आक्रमण और फिर ईस्ट–इण्डिया कम्पनी के शासन के कारण मिथिला की पारम्परिक शिक्षा पर असर पड़ा। उसने मिथिला के अनेक अध्ययन केन्द्र जैसे– सकरी,सरिसव, उजान, चनौर आदि पर अपना कब्जा जमा लिया जिसके कारण यहाँ के कई विद्वान अन्य जगह पलायन करने लगे।[4]

फिर भी 19वीं सदी में इन तमाम प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच मिथिला ने अपनी पारम्परिक शिक्षा के गौरव को बनाए रखा, जिसके कारण ही मिथिला के ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी वेदांगों के अध्ययन–अध्यापन की परम्परा प्रचलित है।[5]

प्राथमिक शिक्षाः

मिथिला में प्राथमिक शिक्षा के अन्तर्गत बच्चों को अक्षर एवं अंक का ज्ञान दिया जाता था और इसके साथ ही जमीन पर लिखने का भी अभ्यास करवाया जाता था। प्राथमिक शिक्षा मुख्य रूप से मुहल्लों या पाठशालाओं में दिया जाता था। किसी अमीर के दरवाजा, शिक्षकों के आवास, मंदिर के पास अथवा किसी पेड़ के छाँव में प्राथमिक शिक्षा दी जाती थी। उस समय में शिक्षण के लिए सरकारी अनुदानों की अपेक्षा प्रायः पण्डितों या गुरूओं को धनी एवं परोपकारी व्यक्तियों तथा शिक्षा के प्रति पूर्णतः समर्पित व्यक्तियों के द्वारा संरक्षण प्रदान किया जाता था। [6]

प्राथमिक शिक्षा को लेकर एडम और बुकानन ने अपना अलग–अलग सर्वेक्षण किया है, जिसमें एडम के रिपोर्ट के मुताबिक प्राथमिक पाठशाला दो प्रकार के होते हैं– पहले प्रकार की पाठशाला को किसी धनी व्यक्ति के परिवार का समर्थन मिलता था, तो दूसरी शहर या गाँव के उस समुदाय से सहारा पाती थी, जिनके बीच वे स्थापित की जाती थीं।[7]

एडम के समान ही बुकानन ने भी पूर्णियाँ जिले में ऐसे ही शिक्षा का रिपोर्ट तैयार किया। उस समय में शिक्षा का माध्यम स्थानीय भाषा ही थी।[8] बुकानन के अनुसार उस समय में पूर्णियाँ में 643 प्राथमिक स्कूल थे। वहीं एडम के अनुसार 80 प्राथमिक विद्यालय थे। उनके अनुसार जितने पाठशाला थे, उतने ही शिक्षक भी थे। उस समय के शिक्षा में ब्राह्मण की अपेक्षा कायस्थ की संख्या ज्यादा थी। अतः इसका ये मतलब नहीं है कि शिक्षा किसी जाति विशेष की सम्पत्ति थी।

19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में शिक्षकों को वेतन नहीं दिया जाता, बल्कि उनको जमींदार, धनी व्यक्ति तथा महन्थों के द्वारा अनुदान दिया जाता था। छात्रों को एक या दो आने से लेकर एक या दो रूपया तक शिक्षण शुल्क देना पड़ता था।[9] छात्रों द्वारा शनिचरा के अलावे पर्व–त्योहारों के मौसम में उन्हें कुछ अनाज एवं कपड़े दिये जाते थे।[10] इस प्रकार 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में प्राथमिक पाठशालाओं का जाल पूरे मिथिलांचल में फैला हुआ था और सामान की न्यूनतम बौद्धिक आवश्यकता इन पाठशालाओं से पूरी हो जाती थी।

उच्च शिक्षा :

मिथिला में चौपाड़ि उच्च शिक्षा से जुड़ा एक केन्द्र था, जहाँ संस्कृत विषय से शिक्षा संबंधित वेदों एवं अन्य ज्ञान की शाखाओं का अध्ययन किया जाता था।[11]

गौरतलब है कि ऐसे विद्यालयों में संस्कृत के शिक्षक छात्रों कोअपने खर्चे पर देखभाल एवं अध्ययन कराते थे, चाहे इसके लिए उन्हें कर्ज ही क्यों न लेना पड़े।[12] एडम के अनुसार उच्च दृ शिक्षा में संस्कृत विषय के अध्ययन पर ज्यादातर ब्राह्मणों का ही आधिपत्य रहता था, इसमें ज्यादातर छात्र भी ब्राह्मण ही रहते थे। इन संस्कृत विद्यालयों के शिक्षकों को पंडित कहा जाता था। इन शिक्षकों को समाज में ज्यादा मान–सम्मान के साथ–साथ विशिष्ट अवसरों पर इन्हें आमंत्रित कर उन्हें सम्मिलित किया जाता था।[13]

पाठ्यक्रम :

मिथिला में पाठ्यक्रम को मुख्य रूप से साहित्य, व्याकरण, तर्क, पुराण, कानून, ज्योतिष, वेदान्त, धर्मशास्त्र आदि में विभाजित कर विषय विशेष का अध्यापन अलग–अलग विद्वानों द्वारा किया जाता था।

गौरतलब है कि मिथिला में शिक्षा के पाठ्यक्रम को अगर देखा जाय तो बुकानन एवं एडम दोनों के रिपोर्ट समान ही है। बुकानन के द्वारा उस समय में विभिन्न विषयों के अन्तर्गत स्वीकृत या प्रचलित अनेकों पाठ्यपुस्तकों की भी चर्चा की गई है। उसके प्रतिवेदन के मुताबिक मिथिला के पूर्णियाँ जिले में व्याकरण विषय में छात्र सारस्वतकल्प, रत्नमाला, भट्टोजिदीक्षितकृत अष्टाधायी की व्याख्या आदि पुस्तकों का अध्ययन करते थे वहीं एडम ने श्यामारहस्य, ब्रह्मानंदगिरी कृत तारारहस्य जैसे तांत्रिक ग्रंथों का उल्लेख भी अपने सर्वेक्षण रिपोर्ट में किया है।

अतः जाहिर है कि दो अंग्रेज अधिकारियों के द्वारा बनाई गई सर्वेक्षण रिपोर्ट में पाठ्य–पुस्तकों की सूची में कोई निश्चित राय कायम नहीं किया जा सकता। क्योंकि इन अधिकारियों ने बस नमूने के तौर पर कुछ ग्रंथों का उल्लेख किया है, सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि उस समय मिथिला में उपलब्ध पाण्डुलिपियों के एक अंश को सूचीबद्ध कर बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी द्वारा प्रकाशित कराया गया।[14] साथ ही इन पाण्डुलिपियों के चारों खण्ड यह साबित करते हैं कि बुकानन और एडम की रिर्पोटों में जानकारी का अभाव है।

परीक्षा पद्धति :

19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पारम्परिक शिक्षा के अन्तर्गत अगर देखा जाय तो परीक्षा पद्धति का कोई प्रारूप नहीं था, क्योंकि उस समय में छात्रों की संख्या भी कम ही रहती थी, जिससे शिक्षकों को अपने छात्रों के विषय में सारी जानकारी रहती थी कि कौन–सा छात्र कैसा है, इसलिए वहाँ परीक्षा की कोई आवश्यकता नहीं थी। गौरतलब है कि छात्रों की योग्यता को जानने के लिए कुछ–कुछ समय पर मूल्यांकन होता था, उसी से छात्रों के योग्यता की जानकारी शिक्षक को प्राप्त हो जाती थी, यही मूल्यांकन अंतिम होता था।[15]

फिर भी मिथिला में कई तरह के परीक्षाओं का आयोजन होता था जिसमें श्लाका परीक्षा, धौत परीक्षा एवं शरयंत्री परीक्षा प्रमुख थे, जिनमें छात्रों को अलग–अलग परीक्षा पद्धति से होकर गुजरना पड़ता था। जैसे–अगर छात्रों को उच्च शिक्षा प्राप्त करना रहता था तो उसे 'श्लाका परीक्षा' से होकर गुजरना पड़ता था, उसी प्रकार अगर छात्रों को पंडित की योग्यता प्राप्त करनी रहती थी तो 'धौत परीक्षा' से होकर गुजरना पड़ता था एवं 'शरयंत्री परीक्षा' का आयोजन जब छात्र बाहर से पढ़कर आते थे तो अपनी योग्यता को गौरवान्वित करने के लिए देते थे, जिससे मिथिला के लोगों को पता चले कि वो अपना योग्यता पूर्ण रूप से सम्मानित है। मिथिला में 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में इस तरह तीन प्रकार की परीक्षा पद्धति अपनायी जाती थी, किन्तु इसका आमचलन नहीं था।

मिथिला में मुस्लिम शिक्षा :

मिथिला में मुस्लिम शिक्षा हिन्दुओं की शिक्षा के तरह ही था, मुस्लिम जाति उच्च वर्ग में भी शिक्षा और ज्ञान का विशेष महत्त्व था। मुस्लिम वर्ग में एक परम्परा के द्वारा पिता अपने बच्चों को एक अच्छी शिक्षा से बड़ा कोई उपहार नही दे सकता।[16]

मुस्लिम शिक्षा का प्रमुख केन्द्र दरभंगा, मुजफ्फरपुर, मनेर, बिहारशरीफ आदि थे, जहाँ पर परम्परागत तरीके से शिक्षा प्रदान की जाती थी।[17] मुस्लिम शिक्षण संस्थान को भी तीन भागों में विभक्त किया जाता है, जैसे– मकतब, खानकाह एवं मदरसा।[18]

मुस्लिम शिक्षा में मकतब को प्राथमिक विद्यालय के रूप में माना जाता था। वहीं दूसरा शैक्षिक केन्द्र खानकाह के रूप में प्रचलित था, जहाँ पर छात्रों को धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। मदरसा को उच्च शिक्षा का रूप में मान्यता प्राप्त थी। इन तीन भागों में पुस्तकालय भी हुआ करते थे, जिसमें ईस्लाम की पुस्तक भरी रहती थी।

स्पष्ट है कि उस समय में मुस्लिम शिक्षा की स्थिति काफी बेहतर थी। जिसमें एडम के अनुसार पूर्ववर्ती मुस्लिम जमींदारों तथा शासकों द्वारा मुस्लिम शिक्षा के विकास हेतु अनुदान दिये जाते थे।

निष्कर्ष :

अतः हम कह सकते है कि मिथिला में स्थानीय शासकों से शिक्षा को पूर्ण अनुदान एवं संरक्षण प्राप्त हुआ। मिथिलावासी को अपनी परम्परागत शिक्षा पर गर्व है, और अंग्रेज भी इसमें बाधा उत्पन्न नहीं कर सके। वस्तुतः कम्पनी शासन की उपस्थिति मात्र से ही शिक्षा के विकास में कुछ बाधाएँ तो जरूर उत्पन्न हुई परन्तु इसके बावजूद भी इस संक्रमण के दौर भी मिथिला में पारम्परिक शिक्षा जारी रही। मिथिला अब भी संस्कृत शिक्षा का एक सम्मानित केन्द्र बना रहा और मिथिला क पंडितों का स्वागत उत्तर भारत के अधिकांश देशी नरेशों के द्वारा उत्साहपूर्वक किया जाता था।

सन्दर्भ सूची

1. ओ ″मैली′′, दरभंगा गजेटियर, 1948, पृ0–9
2. राजेश्वर ठाकुर, मिथिला संस्कृति एवं परम्परा, जानकी प्रकाशन, पटना, 2001, पृ0–130
3. बी0 मिश्र, अर्ली हिस्ट्री ऑफ मिथिला, पृ0–151
4. परमेश्वर झा, मिथिला तत्त्व विमर्श, दरभंगा 1949, पृ0–151
5. पं0 छेदी झा द्विजवरः गोस्वामी लक्ष्मीनाथ की वृहत् जीवनी, प्रथम संस्करण, पृ0–6–10
6. शिशिर कुमार, प्राक् औपनिवेशिक मिथिला संस्कृति (अप्रकाशित शोध प्रबंध), 2010, ल०ना०मि०विश्वविद्यालय, दरभंगा, पृ0–164
7. एडम रिर्पोट्स, ऑन दि स्टेट ऑफ एजुकेशन इन बंगाल, पृ0–56
8. फ्रांसीस बुकानन, एन एकाउण्ट ऑफ द डिस्ट्रिक्ट ऑफ पूर्णियाँ इन 1809–1810, बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, पटना, 1928, पृ0–169
9. आर0आर0 दिवाकर, बिहार थ्रू दि एजेज, के0 पी0 जायसवाल रिसर्च इन्सटीच्यूट पटना, 200, पृ0–716
10. एस0 मोहम्मद, हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन इन इण्डिया, अलीगढ़, 1895, पृ0–2
11. जटाशंकर झा, बायोग्राफी ऑफ एन इण्डियन, पैट्रिएटरू महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह ऑफ दरभंगा, 1972, पृ0–1
12. एडम रिर्पोट्स ऑन दि स्टेट ऑफ एजुकेशन इन बंगाल, पृ0–268–272
13. रंजन सिन्हा, आसपेक्ट ऑफ सोसायटी एण्ड इकोनोमी ऑफ बिहार, जानकी प्रकाशन, पटना, 1989, पृ0–101
14. द्रष्टव्य, ए डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग ऑफ मैन्यूस्क्रिप्टस इन मिथिला, वोल्युम–1,2,3,4 काशी प्रसाद शास्त्री (सं0) बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, पटना, 1927
15. मिथिला भारती, पटना, वोल्युम–1, पार्ट– पृ०–प्प्दृट, 106
16. एस0एच0 अस्करी, इस्लाम एण्ड मिडिएवल बिहार, खुदा बख्श ओरिएण्टल पब्लिक लाइब्रेरी पटना, सेकेण्ड एडिशन, 1998, पृ0–121
17. बिहारी लाल 'फितरत', आइन–ए–तिरहुत (उर्दू) मतब बहार, काश्मीर, लखनऊ, 1883, पृ0–93–114
18. सैयद हसन अस्करी और कयामुद्दीन अहमद (सम्पा०), कम्प्रिहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ बिहार, वोल्युम–प्, पार्ट–प्, काशी प्रसाद जायसवाल, रिसर्च इन्सटीच्यूट, पटना 1987, पृ०–386